माधवराव सप्रे

माधवराव सप्रे (1871-1926) हिन्दी के आरम्भिक कहानीकारों में से एक, सुप्रसिद्ध अनुवादक एवं हिन्दी के आरम्भिक सम्पादकों में प्रमुख स्थान रखने वाले सम्पादक हैं। वे हिन्दी के प्रथम कहानी लेखक के रूप में जाने जाते हैं। माधवराव सप्रे का जन्म सन 1871 ई. में दमोह जिले के पथरिया ग्राम में हुआ था। बिलासपुर में मिडिल तक की पढ़ाई के बाद मैट्रिक शासकीय विद्यालय रायपुर से उत्तीर्ण किया। कलकत्ता विश्वविद्यालय से बी.ए. करने के बाद उन्हें तहसीलदार के रूप में शासकीय नौकरी मिली। बिलासपुर जिले के एक छोटे से गाँव पेंड्रा से ''छत्तीसगढ़ मित्र'' नामक मासिक पत्रिका निकाली।

आपने मराठी में रचित समर्थ रामदास के 'दासबोध', लोकमान्य तिलक रचित 'गीतारहस्य' जैसे मराठी ग्रंथों, पुस्तकों का हिन्दी में अनुवाद भी बखूबी किया। 'एक टोकरी-भर मिट्टी' को हिन्दी की पहली कहानी होने का श्रेय प्राप्त है। 1924 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के देहरादून अधिवेशन में सभापति रहे थे।

कथा-सार

'एक टोकरी-भर मिट्टी' हिन्दी की पहली कहानी सिद्ध हुई। इस कहानी में एक विधवा स्त्री के माध्यम से जमींदारों द्वारा गरीब जनता पर होनेवाले अन्याय को दर्शाया गया है। विधवा स्त्री की दयनीय अवस्था और नियति द्वारा उसके पारिवारिक सदस्यों का निधन होना उसकी दुर्दशा को व्यक्त करता है। जमींदार के द्वारा जबरदस्ती उसके झोंपड़ी पर कब्जा करना और झोंपड़ी की एक टोकरी-भर मिट्टी का उसके द्वारा न उठना उसके अपराधी भाव को दर्शाता है। अन्ततः इसी अपराध भाव का अहसास कर कृतकर्म का पश्चाताप करते हुए जमींदार का विधवा से माफी माँगना कहानी को आदर्शात्मक स्तर पर उठाता है। यह कहानी हिन्दी की पहली कहानी होकर भी प्रभाव की दृष्टि से मौलिक है।

एक टोकरी-भर मिट्टी

किसी श्रीमान् जमींदार के महल के पास एक गरीब अनाथ विधवा की झोंपड़ी थी। जमींदार साहब को अपने महल का हाता उस झोंपड़ी तक बढ़ाने की इच्छा हुई। विधवा से बहुतेरा कहा कि अपनी झोंपड़ी हटा ले, पर वह तो कई जमाने से वहीं बसी थी; उसका प्रिय पति और इकलौता पुत्र भी उसी झोंपड़ी में मर गया था। पतोहू भी एक पाँच बरस की कन्या को छोड़कर चल बसी थी। अब यही उसकी पोती इस वृद्धाकाल में एकमात्र आधार थी। जब उसे अपनी पूर्वस्थिति की याद आ जाती तो मारे दुःख के फूट-फूट कर रोने लगती थी। और जबसे उसने अपने श्रीमान् पड़ोसी की इच्छा का हाल सुना, तब से वह मृतप्राय हो गई थी। उस झोंपड़ी में उसका मन इतना लग गया था कि बिना मरे वहाँ से वह निकलना नहीं चाहती थी। श्रीमान् के सब प्रयत्न निष्फल हुए, तब वे अपनी जमींदारी चाल चलने लगे। बाल की खाल निकालने वाले वकीलों की थैली गरम कर उन्होंने अदालत से झोंपड़ी पर अपना कब्जा करा लिया और विधवा को वहाँ से निकाल दिया। बिचारी अनाथ तो थी ही, पास-पड़ोस में कहीं जाकर रहने लगी।

एक दिन श्रीमान् उस झोंपड़ी के आसपास टहल रहे थे और लोगों को काम बतला रहे थे कि वह विधवा हाथ में एक टोकरी लेकर वहाँ पहुँची। श्रीमान् ने उसको देखते ही अपने नौकरों से कहा कि उसे यहाँ से हटा दो। पर वह गिड़गिड़ाकर बोली, "महाराज, अब तो यह झोंपड़ी तुम्हारी ही हो गई है। मैं उसे लेने नहीं आई हूँ। महाराज क्षमा करें तो एक विनती है।" जमींदार साहब के सिर हिलाने पर उसने कहा, "जब से यह झोंपड़ी छूटी है, तब से मेरी पोती ने खाना-पीना छोड़ दिया है। मैंने बहुत-कुछ समझाया पर वह एक नहीं मानती। यही कहा करती है कि अपने घर चल। वहीं रोटी खाऊँगी। अब मैंने यह सोचा कि इस झोंपड़ी में से एक टोकरी-भर मिट्टी लेकर उसी का चूल्हा बनाकर रोटी पकाऊँगी। इससे भरोसा है कि वह रोटी खाने लगेगी। महाराज कृपा करके आज्ञा दीजिए तो इस टोकरी में मिट्टी ले आऊँ!" श्रीमान् ने आज्ञा दे दी।

विधवा झोंपड़ी के भीतर गई। वहाँ जाते ही उसे पुरानी बातों का स्मरण हुआ और उसकी आँखों से आँसू की धारा बहने लगी। अपने आंतरिक दुःख को किसी

तरह सँभालकर उसने अपनी टोकरी मिट्टी से भर ली और हाथ से उठाकर बाहर ले आई। फिर हाथ जोड़कर श्रीमान् से प्रार्थना करने लगी, ''महाराज, कृपा करके इस टोकरी को जरा हाथ लगाइए जिससे कि मैं उसे अपने सिर पर धर लूँ।'' जमींदार साहब पहले तो बहुत नाराज हुए। पर जब वह बार-बार हाथ जोड़ने लगी और पैरों पर गिरने लगी तो उनके मन में कुछ दया आ गई। किसी नौकर से न कहकर आप ही स्वयं टोकरी उठाने आगे बढ़े। ज्योंही टोकरी को हाथ लगाकर ऊपर उठाने लगे त्योंही देखा कि यह काम उनकी शक्ति के बाहर है। फिर तो उन्होंने अपनी सब ताकत लगाकर टोकरी को उठाना चाहा, पर जिस स्थान पर टोकरी रखी थी, वहाँ से वह एक हाथ भी ऊँची न हुई। वह लज्जित होकर कहने लगे, ''नहीं, यह टोकरी हमसे न उठाई जाएगी।''

यह सुनकर विधवा ने कहा, ''महाराज, नाराज न हों, आपसे एक टोकरी-भर मिट्टी नहीं उठाई जाती और इस झोंपड़ी में तो हजारों टोकरियाँ मिट्टी पड़ी है। उसका भार आप जन्म-भर क्योंकर उठा सकेंगे? आप ही इस बात पर विचार कीजिए।''

जमींदार साहब धन-मद से गर्वित हो अपना कर्तव्य भूल गए थे पर विधवा के उपर्युक्त वचन सुनते ही उनकी आँखें खुल गईं। कृतकर्म का पश्चाताप कर उन्होंने विधवा से क्षमा माँगी और उसकी झोंपड़ी वापिस दे दी।

(1900)